RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल-011/2015-17

साप्ताहिक
आर्य मर्यादा
आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्ष: 45, अंक : 16 एक प्रति 2 : रुपये
कुल पृष्ठ : 8
रविवार 12 जुलाई, 2020
विक्रमी सम्वत् 2077, सृष्टि सम्वत् 1960853121
दयानन्दाब्द : 196 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये
आजीवन शुल्क : 1000 रुपये

दूरभाष : 0181-2292926, 5062726
E-mail: apspunjab2010@gmail.com,
www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष-45, अंक : 16, 9-12 जुलाई 2020 तदनुसार 29 आषाढ़, सम्वत् 2077 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

मेरे दोष दूर हों

ले०-स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

यन्मे छिद्रं चक्षुषो हृदयस्य मनसो वातितृण्णं बृहस्पतिर्मे तद्दधातु।
शं नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः।।

-यजुः० ३६।२

शब्दार्थ-यत्= जो **मे**= मेरे **चक्षुषः**= नेत्र का **हृदयस्य**= हृदय का **छिद्रम्**= छिद्र है, **वा**= अथवा **मनसः**= मन का **अतितृण्णम्**= बहुत बड़ा छिद्र या घाव है-**मे**= मेरे **तत्**= उस छिद्र को **बृहस्पतिः**= बड़ा रक्षक भगवान् **दधातु**= पूरा करे, **यः**= जो **भुवनस्य**= संसार का **पतिः**= पालक, स्वामी है, वह **नः**= हमारे लिए **शम्**= शान्तिदायक **भवतु**= हो।

व्याख्या-जीव अल्पज्ञ है। अल्पज्ञता के कारण उससे त्रुटियाँ होती हैं। वाणी भगवान् ने बोलने को दी है, किन्तु इस वाणी से मनुष्य असत्य, कठोर, अमङ्गल और असम्बद्ध प्रलाप करने लगता है। यह मानव-देह इस भवसागर से पार उतरने की नौका है, किन्तु मनुष्य हिंसा, चोरी और व्यभिचार द्वारा इसमें भी छिद्र कर देता है। मन भगवान् ने मनन, विचार के लिए दिया, किन्तु मनुष्य इससे नास्तिकता, परद्रोह और दूसरे के धन-हरण की बातें सोचा करता है। चक्षु भगवान् ने देखने को दी, किन्तु मनुष्य इससे अभद्र रूपों और आकारों को देखकर मन और अन्तः करण को दूषित और कलुषित करता है। इसी प्रकार दूसरी इन्द्रियों तथा साधनों के सम्बन्ध में विचार कर लीजिए। इस मन्त्र में भगवान् से प्रार्थना है कि-**'यन्मे छिद्रं चक्षुषो हृदयस्य मनसो वातितृण्णं बृहस्पतिर्मे तद् दधातु'**= मेरे दर्शन में, मेरे भावों में तथा मेरे मन में जो त्रुटि है, उसे बड़ा पालक पूरा कर दे।

दूसरे स्थान में प्रार्थना है-**'देवकृतस्यैनसोऽवयजनमसि' [यजुः ८।१३]**= इन्द्रियकृत अपराध का तू शोधक है। **'आत्मकृतस्यैनसोऽवयजनमसि' [यजुः० ८।१३]** = आत्मा के किये अपराधों का भी तू शोधक है, अतः यहाँ भी उसी से प्रार्थना है कि यह महान् भगवान् दोषों को दूर करे। आँख [आँख समस्त इन्द्रियों की उपलक्षण है] में यदि छिद्र रहेगा तो स्पष्ट दिखलाई नहीं देगा। हृदय में यदि भद्दे भाव होंगे तो व्याकुलता एवं शङ्का रहेगी। मन में विकार रहा तो सभी कार्यों में बिगाड़ रहेगा। यदि इच्छा है कि किसी करण-उपकरण में कोई दोष न रहे तो यत्न करो कि-**'शन्नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः'** = जो लोक का, समस्त संसार का रक्षक है, वह कृपा करता रहे। प्रभु की कृपा बनी रहे तो समस्त दोष नष्ट हो जाएँ। अतएव उससे पुनः-पुनः प्रार्थना है-**'अनुमार्ष्टु तन्वो यद्विलिष्टम्' [यजुः० ८।१४]** = जो मेरे शरीर की त्रुटियाँ हैं, भगवान् उन्हें आत्मा की अनुकूलता से शुद्ध करे।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

त्वमिमा ओषधिः सोम विश्वास्त्वमपो अजनयस्त्वङ्गाः।
त्वमातनोरुर्वाऽन्तरिक्षं त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ।।

-पू० ६.३.१२.३

भावार्थ-हे परम दयालु परमात्मन्! आपने हमारे कल्याण के लिए गेहूँ, चना, चावल आदि औषधियों को उत्पन्न किया और आपने ही जलों को, गौ आदि उपकारक पशुओं को, और बड़े अन्तरिक्ष लोक और उसके पदार्थों को बनाया है। और सूर्य आदि ज्योतियों से अन्धकार का भी नाश किया है। यह सब काम हम जो आपके प्यारे पुत्र हैं उनके लिए ही आपने किये हैं।

अभि त्वा शूर णोनुमोऽदुग्धा इव धेनवः।
ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुषः।।

-पू० ३.१.५.१

भावार्थ-हे महाबली परमेश्वर! चराचर संसार के स्वामिन्, सूर्य आदि सब ज्योतियों के प्रकाशक! जैसे जंगल में अनेक प्रकार के घास आदि तृणों को खाकर गौएँ अपने बच्चों को दूध पिलाने के लिए भागी चली आती हैं, ऐसे ही प्रेम और भक्ति से नम्र हुए हम आपको बार-बार प्रणाम करते हुए आपकी शरण में आते हैं।

अच्छा समुद्रमिन्दवोऽस्तं गावो न धेनवः।
अग्मन्नृतस्य योनिम्।।

-उ० १.१.३

भावार्थ-शान्त स्वभाव परमेश्वर के प्यारे, भगवद्भक्त उपासक लोग, वेद को प्रकट करने वाले परमात्मा को भली प्रकार प्राप्त होकर आनन्द को पाते हैं। जैसे दूध देने वाली गौएँ वन में घास आदि तृणों को खाकर अपने घरों में आकर सुखी होती हैं, ऐसे ही भगवद्भक्त, परमात्मा की उपासना करते हुए, उसी भगवान् को प्राप्त होकर सदा आनन्द में रहते हैं।

मा ते राधांसि मा त ऊतयो वसोऽस्मान् कदाचनादभन्।
विश्वा च न उपमिमहि मानुष वसूनि चर्षेणिभ्य आ।।

-उ० ८.३.५

भावार्थ-हे सबके हितकारक सबके स्वामी अन्तर्यामी प्रभो! आपके दिये अनेक प्रकार के अन्न आदि उत्तम पदार्थ हमको कभी कष्टदायक न हों। आपकी दी हुई रक्षाएँ हमें सदा सुखदायक हों। भगवान्! अनेक प्रकार के पापों का फल जो निर्धनता, दरिद्रता है, वह हमें कभी प्राप्त न हो। किन्तु हमारे देशवासी भ्राताओं को अनेक प्रकार के धन-धान्य से पूर्ण कीजिये और सबको धर्मात्मा बनाकर सदा सुखी बनाइये।

वैदिक त्रैतवाद की सार्वभौमिकता

ले.-शिवनारायण उपाध्याय, दादाबाडी कोटा (राज.)

भारत में दार्शनिकों ने सृष्टि के विषय में चर्चा करते समय नाना सिद्धान्तों को जन्म दिया है। स्वामी शंकराचार्य ने अद्वैतवाद सिद्धान्त का प्रचार किया। सांख्य दर्शन को आधार बनाकर कुछ दार्शनिकों ने द्वैतवाद का प्रचार किया। श्री रामानुजाचार्य ने विशिष्टाद्वैत सिद्धान्त की खोज की। श्रीमध्वाचार्य ने द्वैत सिद्धान्त स्वीकारने पर बल दिया। श्री बल्लभाचार्य ने शुद्धाद्वैत सिद्धान्त का प्रचार किया और श्री निम्बार्काचार्य ने द्वैत-अद्वैत सिद्धान्त खोज निकाला। अपने चिन्तन को सबने सर्वोत्कृष्ट मान कर ब्रह्म सूत्र अथवा वेदान्त दर्शन पर भाष्य किए और सूत्रों के अर्थों को तोड़ मरोड़कर अपने पक्ष को सत्य सिद्ध करने का प्रयत्न किया। इसके साथ ही इन सब का यह मानना है कि वेद भी उनकी मान्यता का समर्थन करता है। इस लेख में हम वेद के मन्त्रों के आधार पर यह बताने का प्रयत्न करेंगे कि इस विषय में वेद की मान्यता वास्तव में क्या है?

हम वेद के मन्त्रों को उसी रूप में पाठकों के सम्मुख रखेंगे जिस रूप में वे हैं।

हम अपनी ओर से मन्त्रों के अर्थों में कोई बात ढूंढने का प्रयत्न नहीं करेंगे। पहले हम ऋग्वेद से इस विषय में ऋग्वेद की ऋचाओं के आधार पर चर्चा करते हैं।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परि षस्वजाते।

तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नयो अभिचाकशीति।।

पदार्थ-(द्वा) दो ब्रह्म और जीव दोनों (सुपर्णा) चेतनता और पालनादि गुणों से समान (सयुजा) व्याप्य व्यापक भाव से संयुक्त (सखाया) परस्पर मित्रतायुक्त और (समानम्) वैसा ही (एक ही) (वृक्षम्) प्रकृति का कार्य युक्त वृक्ष का (परि षस्वजाते) आश्रय करते हैं। (तयोः) उनमें से (अन्यः) एक (पिप्पलम्) उस वृक्ष के पके हुए फल को (स्वादु) स्वादुपन से (अत्ति) खाता है और (अन्यः) दूसरा (अनश्नवत्) न खाता हुआ (अभि चाक शीति) सब ओर से देखता है।

भावार्थ-सुन्दर चलने फिरने अथवा क्रिया जन्य काम को जानने वाले, व्याप्य व्यापक भाव के साथ ही रहने वाले मित्रों के समान वर्तमान दो पक्षी (जीवात्मा और परमात्मा) समान कार्य कारण रूप ब्रह्माण्ड़ देह (वृक्ष) का आश्रय करते हैं। उन दोनों अनादि जीव-ब्रह्म में जो जीव है वह पाप-पुण्य से उत्पन्न सुख दुःखात्मक भोगों को स्वादुपन से भोगता है और दूसरा ब्रह्मात्मा कर्मफल को न भोगता हुआ उस भोगते हुए जीव को सब ओर से देखता रहता है। ऋग्वेद में कहा गया है-हे जीवों। तुम उस परमेश्वर को नहीं जानते हो जो इन समस्त लोक-लोकान्तरों को उत्पन्न करता है तथा तुमसे भिन्न कोई दूसरे तुम्हारे हृदय में विद्यमान है। अज्ञानान्धकार से आच्छादित जन बहुत बोलने वाले, प्राणों की तृप्ति में ही संलग्न जन और केवल शब्दाडम्बर करने वाले घूमते हैं परन्तु उसे नहीं जानते हैं।

इस मन्त्र में स्पष्ट रूप से जीव और परमात्मा के विषय में कथन है। ईश्वर संसार की रचना क्यों करता है? इस विषय में कहा गया है, 'हे प्रकृति शक्ति। मैं इन्द्र (परमेश्वर) अपने मित्र जीवात्मा के बिना इस जगत में नहीं रमता अथवा इसे व्यक्त करता। मुझ इन्द्र परमेश्वर का यह जगत् प्रकृति के परमाणुओं से बना हुआ प्रिय और भोग्य इन्द्रियों में व्याप्त होता है अथवा प्राप्त होता है। उससे स्पष्ट है कि सृष्टि की उत्पत्ति प्रकृति से की है और जीवात्मा के कर्म फल भोग के लिए की है।

प्रकृति सृष्टि का उपादान कारण है। इस विषय में कहा गया है सृष्टि की प्रागवस्था में परमेश्वर की पत्नी (अलंकारिक वर्णन) परमेश्वर प्रदत्त बीज को ग्रहण करती है और संसर्ग को प्राप्त करती है। सृष्टि क्रम की विधात्री, जगत् के पदार्थों की उत्पादिका परमेश्वर की पत्नी हुई महत्व को प्राप्त है।

ईश्वर-जीव के आपसी सम्बन्धों को बताने वाली ऋग्वेद में कई ऋचाएं है। इन ऋचाओं में ईश्वर को जीव का माता, पिता, मित्र, बन्धु स्वामी आदि के रूप में निरूपित किया गया है। ऋग्वेद मण्डल।

सूक्त 187 की प्रथम 7 ऋचाओं में उसे पिता (पालक) के रूप में बताया गया है। इस तरह एक स्थान पर वर्णन है, संसार में व्यथाएं खाए डालती है जैसे चूहा रस के भीगे वस्त्र को खाता है। फिर कहा गया है, 'जो परमेश्वर हमारा पिता उत्पन्न करने वाला जो सब जगत का रचयिता है जो समस्त स्थानों, लोकों को जानता है जो समस्त पदार्थों का नाम रखने वाला और अद्वितीय है। उस ही सभी प्रश्नों के प्रश्न को दूसरे भुवन आदि प्राप्त होते हैं। सृष्टि की रचना ईश्वर ही करता है इस पर कहा गया है, हे मनुष्यों। जिस सर्वशक्तिमान जगदीश्वर के बिना यह जो दृष्टिगोचर संसार है वह कभी नहीं सिद्ध हो सकता। वह जगदीश्वर सब मनुष्यों की बुद्धि और कर्मों को, संयोग को व्याप्त होता अथवा जानता है। वास्तव में सृष्टि की रचना अत्यन्त बुद्धिपूर्वक परमात्मा ने की है। जो भी रचना है वह सप्रयोजन है निरर्थक नहीं है। कहा गया है, 'जैसे बढ़ई आकृतियों को रचता है वैसे ही यह ज्ञान एवं कर्म स्वरूप परमात्मा ही हमें विविध रूप प्रदान करने में समर्थ है। इस परमेश्वर के सभी कर्म यशस्वी के कार्यों के समान है। इन मंत्रों से यह स्पष्ट प्रमाणित हो गया है कि सृष्टि की रचना परमेश्वर द्वारा जीवात्मा के कर्म, फल भोग के लिए की है और प्रकृति उसका उपादान कारण है। परमात्मा सर्वशक्तिमान है। इस विषय में कथन है, मैं सर्वशक्तिमान हूं। किसी से भी पराजित नहीं होता हूं। मेरा धन यह प्रकृति भी कभी समाप्त नहीं होती। मैं कभी भी मृत्यु के लिए उपस्थित नहीं होता हूं। सोम को तैयार करने वाले यजमानो। मुझे ही धन प्राप्ति के लिए पुकारो। मुझसे ही धन मांगो। हे मनुष्यों मेरी मैत्री में कभी नाश को प्राप्त मत होओ।

इसी त्रैतवाद को वेद में एक दूसरे ढंग से भी कहा गया है-'हे मनुष्यों। यह समस्त चर और अचर जगत् ईश्वर से आच्छादित है। उसके द्वारा दिए गए पदार्थों का त्यागपूर्वक भोग करो। लालच मत करो। यह समस्त धन तो सुख स्वरूप परमात्मा का है। यह मंत्र भी त्रैतवाद को सिद्ध कर रहा है। एक गतिशील चर, अचर पदार्थों से युक्त जगत है, दूसरा इसमें व्यापक परमात्मा है। एक देने वाला परमात्मा है और दूसरा लेने वाला जीवात्मा है। जगत् में कर्म करने और उनका फल भोगने वाला जीवात्मा है। उसे सम्बोधित कर कहा गया है, कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविच्छेतं समाः।। अर्थात् सौ वर्ष तक कर्म करता हुआ सौ वर्ष तक जीवित रहने की इच्छा करे। इसी जीवात्मा के लिए कहा गया है, हे कर्म करने वाले जीव। तू शरीर छोड़ते समय ओ३म् का स्मरण कर। अपने किए हुए कर्मों का स्मरण कर। इस संसार का धनन्जय वायु कारण स्वरूप वायु को, अविनाशी कारण को धारण करता इसके अनन्तर यह शरीर नष्ट हो जाने वाला सुखादि का आश्रय अन्त में भस्म हो जाने वाला है।

इसी मन्त्र में त्रैतवाद का समर्थन है। फिर ईश्वर के स्वरूप का इस प्रकार वर्णन किया गया है। हे मनुष्यों जो एक अद्वितीय, अचल, कम्पन रहित, मन के वेग से भी अधिक वेगवान्, सबसे आगे चलता हुआ अर्थात् जहां कोई चल कर पहुंचे वहां ब्रह्म अपनी व्याप्ति से पहले ही पहुंचा हुआ होता है। इस ब्रह्म को चक्षु आदि इन्द्रियां नहीं प्राप्त होते वह ब्रह्म अपने आप में स्थिर हुआ अपनी अनन्त व्याप्ति से विषयों की ओर दौड़ते हुए आत्मा के स्वरूप से विलक्षण तथा वाणी आदि इन्द्रियों का उल्लंघन कर जाता है। उस सर्वत्र व्याप्त ईश्वर की स्थिरता में अन्तरिक्ष में प्राणों का धारण करने वाले तुल्य जीव कर्म को धारण करता है। इसी धारणा का विस्तार करते हुए कहा गया है कि वह ब्रह्म स्वयं उत्पन्न, सर्व व्यापक, अशरीरी स्नायुरहित, निष्पाप, तेजोमय, क्षत रहित, पवित्र, सर्व द्रष्टा, मन का स्वामी, सबके उपर रहने वाला है। उसने वस्तु स्थिति के अनुसार सनातन अनादि स्वरूप अपने अपने स्वरूप से उत्पत्ति और विभाग रहित प्रजाओं के लिए वेद द्वारा सब पदार्थों को बनाता है उसी की उपासना करनी योग्य है। आगे पुनः बलपूर्वक कहा गया है, जो यह अनेक प्रकार का जगत है वह व्यापक परमेश्वर के प्रकाश से उत्पन्न होकर प्रकाशित है। आनन्दमय परमेश्वर इससे विस्तृत है। सब जगत यक्ष का साधन है। सब में व्याप्त उस ईश्वर का

(शेष पृष्ठ 7 पर)

सम्पादकीय

राष्ट्र का मुखिया कैसा होना चाहिए?

भारत के प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने लेह लद्दाख का दौरा करके सैनिकों में नये जोश का संचार किया है। प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने अपने इस दौरे से पड़ोसी देश चीन को कड़ा संदेश दिया है कि भारत चीन की विस्तारवाद की नीति को आगे बढ़ने नहीं देगा। चीन की विस्तारवादी नीतियों को चुनौती देते हुए प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने कहा कि इतिहास गवाह है कि विस्तारवादी ताकतें मिट जाती हैं। उन्होंने कहा कि हम न कभी झुके हैं और न कभी झुकेंगे। प्रधानमन्त्री ने रामधारी सिंह दिनकर की कविता की कुछ पंक्तियां पढ़ी-

जिनके सिंहनाद से सहमी धरती रही अभी तक डोल,
कलम, आज उनकी जय बोल।

प्रधानमन्त्री जी ने कहा कि भारत मां के दुश्मनों ने भारतीय जवानों की फायर एंड फ्यूरी देखी है। 14 कोर के जवानों की वीरता देश के घर-घर में गूंज रही है। महान तमिल कवि तिरूवल्लुवर ने कहा था- शौर्य सम्मान, मर्यादापूर्ण व्यवहार और विश्वसनीयता ये चार गुण किसी भी देश की सेना के प्रतिबिंब होते हैं। भारतीय सेना हमेशा से इसी मार्ग पर चलती आई है। प्रधानमन्त्री ने कहा- भारत के लोग बांसुरीधारी भगवान कृष्ण की पूजा करते हैं, लेकिन सुदर्शन चक्रधारी श्रीकृष्ण भी हमारे आदर्श हैं। हमारे यहां कहा जाता है- वीर भोग्या वसुंधरा अर्थात् वीर अपने शस्त्र की ताकत से ही मातृभूमि की रक्षा करते हैं। मातृभूमि की रक्षा और सुरक्षा की हमारी क्षमता और संकल्प हिमालय जैसा ऊंचा है। हमें कोई भी ताकत नहीं झुका सकती।

प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने कहा कि शांति के प्रति वचनबद्धता को हमारी कमजोरी नहीं समझना चाहिए। विकास के लिए शान्ति और मित्रता का हर कोई पक्षधर है। लेकिन निर्बल शान्ति नहीं ला सकता। वीरता शान्ति की पहली शर्त है। भारत ने नभ, जल, थल और अन्तरिक्ष में ताकत बढ़ाई है। सीमाई ढांचागत खर्च तीन गुणा बढ़ा है। दुनिया ने भारत के पराक्रम और शांति दोनों प्रयास देखें हैं।

प्रधानमन्त्री 11 हजार फीट की ऊंचाई पर स्थित नीमू में अग्रिम सैन्य ठिकाने पर सेना, आईटीबीपी और वायुसेना के जवानों से मिले। उनका हौंसला बढ़ाया। उसके बाद गलवान घाटी में 15 जून को चीनी सेना के साथ संघर्ष में घायल सैनिकों से मिले। प्रधानमन्त्री ने गलवान घाटी की झड़प का जिक्र करते हुए कहा कि भारतीय सेना ने पराक्रम की पराकाष्ठा दिखाई। अपनी वीरता से पूरी दुनिया को भारत की ताकत का संदेश दिया है। उन्होंने चीन का नाम लिए बिना उसे चेतावनी भी दी और कहा कि- विस्तारवाद का युग समाप्त हो गया है। अब विकासवाद का युग है। विकासवाद ही भविष्य का आधार है। विस्तारवाद की जिद्द ने हमेशा मानवता के लिए खतरा पैदा किया है। इतिहास गवाह है कि विस्तारवादी ताकतें या तो मिट कर रह गई हैं या मुड़ने पर मजबूर हुई। पूरे लद्दाख को भारत का अभिन्न अंग बताते हुए उन्होंने कहा कि लद्दाख देश का मस्तक है। 130 करोड़ देशवासियों के गौरव का प्रतीक हैं। घायल सैनिकों से मिलने पहुंचे प्रधानमन्त्री ने कहा कि आपको छूकर और देखकर ऊर्जा मिलती है। मैं आपको नमन करने आया हूँ। हमारा देश न तो कभी झुका है और न ही कभी किसी के आगे झुकेगा।

अथर्ववेद के १२ वें काण्ड़ सूक्त संख्या १ में मातृभूमि के विषय में गहन चिन्तन किया गया है। इस सूक्त के प्रथम मन्त्र में राष्ट्र की रक्षा कौन कर सकता है? इस विषय पर चिन्तन किया गया है। इस मन्त्र में कहा गया है कि जिस व्यक्ति में सत्यवादिता, महत्वाकांक्षा अर्थात् आगे बढ़कर नेतृत्व करने की क्षमता, नियम पालन करने की शक्ति, देश की तरफ आँख उठाकर देखने वालों के प्रति उग्र भाव, तेजस्विता, संकल्पशील, तपस्विता, ज्ञान-विज्ञान से सम्पन्न हो वही देश का मुखिया बन सकता है और मातृभूमि की सुरक्षा कर सकता है। हमारा सौभाग्य है कि हमारे देश का नेतृत्व करने वाले प्रधानमन्त्री में इन सभी गुणों का समावेश है।

सत्यं बृहत् ऋतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति।
सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरूं लोकं पृथिवी नः कृणोतु।।

जब तक प्रत्येक राष्ट्रवासी, राष्ट्रहित चिंतक के हृदय में ऐसे ओजस्वी भाव उत्पन्न नहीं होते, तब तक राष्ट्र की रक्षा हो ही नहीं सकती। इसके लिए आवश्यक है कि प्रत्येक राष्ट्रवासी के हृदय में राष्ट्र के प्रति इन गुणों को धारण करने की भावना जागृत की जाए। क्योंकि पराये पदार्थ के लिए साधारणतया लोग चिन्ता नहीं किया करते। अपने पदार्थ की रक्षा के लिए मनुष्य सर्वदा तत्पर रहा करते हैं। मनुष्य में राष्ट्र के प्रति मर-मिटने का भाव उत्पन्न करना ही पर्याप्त नहीं है प्रत्युत उसमें यह भावना उत्पन्न करनी चाहिए कि वह समर्थ है, प्रबल है, शक्तिशाली है। वह कह सके कि-जैसे यज्ञ सबको दबाने वाला है, जैसे अग्नि सबको दबाने वाला है, जैसे चन्द्र अथवा सर्वोत्तम औषधि सब रोगों को दबाने वाला है, जैसे सूर्य अपने तेज से सबको दबाने वाला है, ऐसे ही मैं भी सब उपद्रवियों का अभिभव कर सकूं अर्थात् उन्हें दबा सकूं।

यजुर्वेद में परमात्मा से राष्ट्र की उन्नति की कामना करते हुए भक्त कहता है कि-

आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम्। आ राष्ट्रे राजन्यो शूरइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायताम्। दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम्। निकामे-निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्। य. २२/२२

हे सबसे महान् भगवान् हमारे राष्ट्र में ब्रह्म तेज से युक्त ज्ञान के प्रकाश से प्रकाशित, ज्ञान-विज्ञान के भण्ड़ार सदाचारी ब्राह्मण हों। शस्त्रास्त्र के संचालन में अद्भुत चतुर सैनिक शिक्षा से पूर्ण सुशिक्षित दुष्टों को दण्ड़ देने में महाबली क्षात्र तेज को भली प्रकार धारण किए हुए महान् शूरवीर पराक्रमी हमारे बल अद्वितीय योद्धा, क्षत्रिय हों। अमोघ धाराओं में दूध देने वाली गौवें, भार ढ़ोने में योग्य शक्तिशाली उत्तम बैल, बड़ी ही उत्तम द्रुतगति वाले घोड़े, सुयोग्य बुद्धि और सुमति से युक्त सदाचारी नारियां, समय-समय पर वर्षा करने वाले बादल, उत्तम औषध रूप गुणदायक वनस्पतियाँ अन्नादि फल और फूल और फिर इन सबके उत्तम रूप से होने पर सम्पूर्ण राष्ट्र का योगक्षेम हो।

प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने लेह लद्दाख के इस दौरे से चीन के साथ-साथ अपने विरोधियों का मुंह भी बन्द कर दिया है जो कहते थे कि प्रधानमन्त्री कहां छुप कर बैठे हैं, जबाव क्यों नहीं देते। प्रधानमन्त्री ने अपने इस दौरे से चीन, पाकिस्तान, नेपाल के साथ-साथ पूरी दुनिया को संदेश दिया है कि भारत किसी से डरने वाला नहीं है। जो हमारी मातृभूमि की तरफ आँख उठाकर देखेगा, उसे मुंहतोड़ जबाव दिया जाएगा। प्रधानमन्त्री ने इस दौरे से अपनी अद्भुत नेतृत्व क्षमता का परिचय दिया है जिसकी उम्मीद 130 करोड़ देशवासी उनसे करते हैं। भारत के प्रत्येक नागरिक को अपने प्रधानमन्त्री पर गर्व है। हम प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के अदम्य साहस को नमन करते हैं। हम भी अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए चीनी सामान का बहिष्कार करें। अपने देश में निर्मित स्वदेशी वस्तुओं को बढ़ावा दें। हर व्यक्ति को सीमा पर जाकर देश की सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त नहीं होता परन्तु अगर उसके अन्दर देशभक्ति का जज्बा है तो वो अपने हर कार्य के द्वारा इसे सिद्ध कर देगा। अपने मोबाईल से सभी चाईनीज एप्स हटाकर चीन के बहिष्कार का समर्थन करें। हम सभी गर्व के साथ प्रधानमन्त्री श्री नरेन्द्र मोदी जी साथ खड़े हैं और देशहित में लिए गए उनके सभी फैसलों का समर्थन करते हैं।

प्रेम भारद्वाज
संपादक एवं सभा महामन्त्री

धर्म गुणों की माला है

ले.-आचार्य रूपचन्द्र 'दीपक' संचालक वैदिक उपदेशक विद्यालय, लखनऊ

धर्म क्या है? इस पर मनुष्य आदिकाल से विचार करता आया है? अब भी विचार करता है और आगे भी करता रहेगा। वस्तुत: धर्म अत्यन्त सूक्ष्म है। वैशेषिक दर्शन के अनुसार-

यतोऽभ्युदयनि: श्रेयस-सिद्धिस्स: धर्म:।।

-अध्याय-1, आह्निक-1, सूत्र-2 अर्थात् धर्म वह साधन है जिससे लौकिक कल्याण एवं मोक्ष की प्राप्ति होती है। यह धर्म किसी बाह्य चिन्ह से नहीं अपितु मनुष्य के आन्तरिक चरित्र से विदित होता है। इस प्रकार धर्म में मनुष्य के सब गुण-कर्म-स्वभाव आ जाते हैं।

धर्म की सत्य के साथ घनिष्ठता है। यह घनिष्ठता इतनी अधिक है कि एक के बिना दूसरे का अस्तित्व ही सम्भव नहीं है। वाल्मीकीय रामायण के अनुसार-

सत्ये धर्म: प्रतिष्ठित:।

अर्थात् धर्म का वास सत्य में है। जहाँ सत्य है, वहीं धर्म है। जहाँ सत्य नहीं, वहाँ धर्म भी नहीं है। किन्तु कतिपय परिस्थितियों में सामान्य सत्य से इतर व्यवहार करना पड़ता है। जैसे भारत का कोई गुप्तचर पाकिस्तान में रहे, वह स्वयं को पाकिस्तान का नागरिक बताता रहे और भारत का कार्य करता रहे, तो धर्म है। यदि वहाँ बता दे कि मैं भारत का गुप्तचर हूँ, यहाँ के रहस्य जानने आया हूँ, तो अधर्म है। इस प्रकार धर्म सत्य से कुछ अधिक है।

धर्म से घनिष्ठता रखने वाला दूसरा गुण है-कर्त्तव्य। जो मनुष्य अपने कर्त्तव्यों का पालन करता है, वह धर्म-पालक है। जो कर्त्तव्य का पालन नहीं करता, वह धर्म पालक नहीं है। जैसे कक्षा में अध्यापक का कर्त्तव्य विद्यार्थी को पढ़ाना एवं उसके चरित्र का निर्माण करना है तथा विद्यार्थी का कर्त्तव्य अध्यापक का आदर करना एवं अपनी विद्या में वृद्धि करना है। ये दोनों अपने पृथक्-पृथक् कर्त्तव्यों का पालन करने पर धार्मिक और ऐसा न करने पर अधार्मिक कहे जायेंगे। किन्तु यदि वही अध्यापक कभी गलत आदेश दे, तो विद्यार्थी का धर्म है कि उसे न माने। विद्यार्थी अपनी विद्या बढ़ाने हेतु यदि बड़ी कक्षा में जा बैठे तो अध्यापक उसे वहाँ से उठा दे। इस प्रकार धर्म कर्त्तव्य से भी कुछ अधिक है।

मनु ने धर्म के चार लक्षण गिनाये हैं-

वेद: स्मृति: सदाचार: स्वस्य च प्रियमात्मन:।

एतच्चतुर्विधं प्राहु: साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम्।।

-मनुस्मृति: अध्याय-1, श्लोक-131 अर्थात् धर्म के चार लक्षण हैं-

(1) वेद (वेद का अध्ययन एवं तदनुसार आचरण करना);

(2) स्मृति (वेदवेत्ता एवं ब्रह्मवेत्ता ऋषियों के वचनों को जीवन में ढालना);

(3) सदाचार (सत्पुरुषों के आचरण का अनुसरण करना;

(4) प्रियमात्मन: (अन्तरात्मा के अनुरूप वर्तना)।

ये चार धर्म के आवश्यक अंग हैं।

प्रकारान्तर से मनुस्मृति में धर्म के दस लक्षण बताये गये है-

धृति: क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रह: धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म-लक्षणम्।।

-अध्याय-6, श्लोक-92 अर्थात् धर्म के दस लक्षण हैं-

1. धृति (संसार की परिवर्तन-शीलता एवं दु:खमयता का बोध करके सदैव धैर्य धारण करना)

(2) क्षमा (प्रत्येक कर्म न तो क्षम्य होता है और न ही अक्षम्य)। किसी कर्म विशेष पर क्षमा छोड़नी होती है। किन्तु अपने स्वभाव में क्षमाशीलता तो रखनी ही चाहिए।

(3) दम (मन पर नियन्त्रण होना)

4. अस्तेय (चोरी का त्याग करना, पराये धन की कामना न करना)

5. शौच (शरीर की स्वच्छता एवं मन की पवित्रता)

6. इन्द्रियनिग्रह (अपनी समस्त इन्द्रियों को अपने अधीन रखकर उन्हें विषयों से बचाना एवं सत्कर्मों में लगाए रखना)

7. धी (बुद्धि को शुद्ध, तीव्र एवं परोपकारमय बनाना)

8. विद्या (भौतिक तथा अध्यात्म विज्ञान की प्राप्ति एवं वृद्धि करना)

9. सत्य (सत्य को जानना, मानना, बोलना एवं करना)

10. अक्रोध (क्रोध एवं उत्तेजना को मन से परे रखना)

इन चौदह तत्त्वों को मिलाकर धर्म बनता है।

अहिंसा परमो धर्म:।

अहिंसा मनुष्यता का आवश्यक एवं सूक्ष्म तत्त्व है। महर्षि व्यास के अनुसार-

अहिंसा सर्वथा सर्वदा सर्वभूतानाम् अनभिद्रोह:।-पातञ्जल योग दर्शन के पाद-2, सूत्र-30 का भाष्य।

अर्थात् समस्त प्राणियों के प्रति, प्रत्येक काल में दुर्भावना से पूर्णतया मुक्त रहना 'अहिंसा' है। अहिंसा वैर-त्याग को कहते हैं। यह तपस्वियों का भूषण एवं धर्म का आवश्यक अंग है। अहिंसा के बिना धर्म असम्भव है। किन्तु राष्ट्र धर्म के पालन में युद्ध किये जाते एवं मृत्यु दण्ड भी दिये जाते हैं। अत: धर्म अहिंसा से कुछ अधिक है।

छान्दोग्य उपनिषद् के अनुसार-

त्रयो धर्मस्कन्धा यज्ञोऽध्ययनं दानमिति।

-प्रपाठक-2. खण्ड-23, श्लोक-1 अर्थात् धर्म के तीन स्तम्भ हैं-

1. यज्ञ (प्रतिदिन अग्निहोत्र, विद्वानों का सत्कार एवं अतिथि सेवा करना)

2. अध्ययन (वेदादि सत्य शास्त्रों का पढ़ना-पढ़ाना एवं सुनना-सुनाना)

3. दान (धन, अन्न, वस्त्र, विद्या एवं उच्च प्रयोजन में आवश्यक होने पर जीवन भी दे देना)

इन तीन स्तम्भों पर धर्मरूपी भवन टिका है। इनमें से एक भी घट जाए तो धर्म घट जाता है।

वेदोऽखिलो धर्ममूलम्।

-मनुस्मृति: अध्याय-1, श्लोक-125

मनु के वचनानुसार वेद सम्पूर्ण धर्म का स्रोत है। वेद का वास्तविक एवं पूर्ण ज्ञान प्राप्त करके उसे अपने कर्मों में ढालने से मनुष्य धर्मवान् बनता है। वेदरूपी सूर्य के प्रकाश में ही धर्मरूपी तत्त्व का दर्शन एवं विवेक होता है। वेद एवं धर्म बराबर हैं।

मतमस्माकं खलु वेदा:। (महर्षि दयानन्द)

अर्थात् वेद ही मनुष्य का धर्म है। वेद मनुष्य मात्र का एकमात्र धर्मग्रन्थ है।

धर्म का सम्बन्ध मनुष्य के आचरण से है।

आचार: परमो धर्म:।

-मनुस्मृति : अध्याय-1, श्लोक-108

अर्थात् मनुष्य का परम धर्म यह है कि वह मन-वचन-कर्म से अपने आचरण को सदा शुद्ध एवं उत्तम रखे। यदि वेद के पठन-पाठन में कोई ऊँचा उठ जाए किन्तु आचरण में नीचा रह जाए, तो धर्म का पालन नहीं हुआ। इसके विपरीत यदि पूर्ण प्रयत्न करने पर भी किसी को वेद की पूर्ण विद्या न आ पायी हो परन्तु आचरण उत्तम बन गया हो, तो धर्म का पालन अधिक माना जाएगा। उक्त आचरण में न्याय, प्रेम, सेवा, त्याग, तप, उपासना आदि का सम्यक् योग बना रहना चाहिए। तभी धर्म का स्वरूप निर्मित होता है।

महाभारत में कहा गया है-

आनृशंस्यं परो धर्म:।

-वनपर्व: यक्ष-युधिष्ठिर संवाद।

अर्थात् दया सर्वश्रेष्ठ धर्म है। दया ही पशु एवं मनुष्य में भेद स्पष्ट करती है। जो स्वयं बलवान् होकर बलहीनों को दबाए, वह चार पैरों वाला हो अथवा दो पैरों वाला, वास्तव में पशु ही है। इसके विपरीत मनुष्य वह है जो बलवान् बनकर बलहीनों पर दया करता है। दया व्यावहारिक धर्म है। किन्तु अनुशासन के लिए अनेक बार दण्ड भी दिया जाता है। अत: धर्म दया से बढ़कर है।

इस प्रकार धर्म के स्वरूप का विश्लेषण करने पर उसके दर्जनों अंग बन जाते हैं-सत्य, कर्त्तव्य, वेदाध्ययन, स्मृति, सदाचार, आत्मानुशासन, धैर्य, क्षमा, संयम, अस्तेय, शुद्धता, जितेन्द्रियता, प्रतिभाशीलता, विद्या, क्रोध-त्याग, अहिंसा, यज्ञ, दान, दया, न्याय, प्रेम, सेवा, त्याग, तप, श्रद्धा, ब्रह्मचर्य, योगाभ्यास, परिश्रम, उपासना, संगठन आदि। पृथक्-पृथक् देखने पर ये सभी धर्म हैं किन्तु धर्म इनमें

(शेष पृष्ठ 5 पर)

परिवर्तनीय थी-वैदिक वर्ण व्यवस्था

ले.-प्रणव मुनि (डॉ. सिंह) 14/95ए विकास नगर, लखनऊ।

आर्य संस्कृति विश्व की सर्वश्रेष्ठ संस्कृति रही है। धर्म हो, अर्थ हो या राजनीति, सभी क्षेत्रों में पुरातन भारत का कीर्तिध्वज अबाध गति से फहराता रहा है। चहुँमुखी विकास के कारण ही इस राष्ट्र ने सभी महत्वाकांक्षी मनुष्यों को अपनी ओर बरबस आकृष्ट किया है। नि:सन्देह इस चहुँमुखी विकास के कारणों में से एक कारण था- इस देश में वैदिक वर्ण व्यवस्था का सुचारू रूप से प्रचलित होना।

वर्णों का उल्लेख सर्व प्रथम वेदों में प्राप्त होता है। ऋग्वेद में कहा गया है-

बाह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्य: कृत:।

उरू तदस्य यद्वैश्य: पद्भ्यां शूद्रो अजायत।

(ऋ. 10.90.12)

इस मंत्र में कहा गया है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र एक ही समाज के अंग है। जो विद्या और शम, दम आदि उत्तम गुणों में मुख के तुल्य उत्तम हों वे ब्राह्मण, जो अधिक पराक्रम वाले भुजा के तुल्य कार्यों को सिद्ध करने वाले हों वे क्षत्रिय, जो व्यापार-विद्या कृषि, पशुपालन आदि कार्यों में प्रवीण हों वे वैश्य तथा जो सेवा में प्रवीण व विद्याहीन, अज्ञान के कारण किसी प्रकार उन्नति करने में असमर्थ हैं, सेवा आदि गुणों से युक्त पगों के समान हैं, वे शूद्र हैं।

वर्ण का निर्धारण-जब बच्चा जन्म लेता है, जन्मत: शूद्र होता है।

''जन्मना जायते शूद्र: संस्काराद् द्विज उच्यते।

-स्कन्ध पुराण, ना.ख. 239.31

अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति जन्म से शूद्र होता है, उपनयन आदि संस्कारों में दीक्षित होकर ही वह द्विज बनता है, उसके पश्चात् अपने गुण-कर्म स्वभाव के अनुसार वर्ण को प्राप्त करता है।

वर्ण को प्राप्त करने हेतु वैदिक व्यवस्था के अनुसार जन्म से 8-10 वर्ष के अन्दर बालक/बालिकाओं को अपने-अपने आचार्य कुलों अर्थात् गुरुकुलों में विद्या प्राप्ति हेतु माता-पिता भेजते थे। राज्य की व्यवस्था होती थी कि जो माता-पिता अपने बालक/बालिकाओं को विद्याध्ययन के लिए नहीं भेजते थे, वे राज्यदण्ड के भागी होते थे। 25 वर्ष तक विद्याध्ययन पूर्ण करने पर बालिकाओं का 16 वर्ष) उनका समावर्तन संस्कार (आजकल के दीक्षान्त समारोह के समान) किया जाता था। उसी समय आचार्य-आचार्या द्वारा युवक/युवती का वर्ण उसके गुण-कर्म स्वभाव की परीक्षोपरान्त निर्धारित कर दिया जाता था।

वर्ण परिवर्तन-वैदिक वर्ण व्यवस्था गुण-कर्म-स्वभाव के अनुसार होने के कारण परिवर्तनीय थी। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र ये चारों भेद गुण-कर्म-स्वभाव के आधार पर किये जाते थे। इन्हें वर्ण इसलिए कहा गया है कि व्यक्ति के जैसे गुण कर्म हों, उसे वैसे ही कार्य सौंपे जाने चाहिए। वर्ण व्यवस्था व्यक्ति की योग्यता पर आधारित श्रम विभाजन है। उत्तम कर्म करने से उत्तम विद्वान् अर्थात् ब्राह्मण, परम ऐश्वर्यवान, वीर्य सम्पन्न होने से क्षत्रिय वर्ण होता है। इसलिए गुण-कर्म-स्वभाव का परीक्षण कर आचार्य समावर्तन संस्कार के अवसर पर अपने शिष्यों को निर्देश देते थे कि यहाँ से समाज में वापस जाकर किसको क्या-क्या और कैसे-कैसे कार्य करने हैं। (ऋ.भा.भू. वर्णाश्रम विषय)। मनु स्मृति में भी-

शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्।

क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्याद् वैश्यात्तथैव च।।

यदि शूद्र कुलोत्पन्न व्यक्ति ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य के समान गुण-कर्म-स्वभाव वाला हो तो वह ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य हो जाये। यदि ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य कुलोत्पन्न व्यक्ति के गुण-कर्म-स्वभाव शूद्रों जैसे हों तो उसे शूद्रों में गिना जाना चाहिए। इस व्यवस्था में स्त्री-पुरुष में कोई भेद नहीं किया गया है।

वर्ण परिवर्तन के ऐतिहासिक साक्ष्य-इस व्यवस्था के आधार पर ही एक साक्ष्य सत्यकाम जाबालि का आता है। सत्यकाम बालक ने गौतम ऋषि के गुरुकुल में प्रवेश पाने की इच्छा प्रकट की तो ऋषि गौतम ने नाम, पता व परिवारादि के विषय में पूछा था, तो सत्यकाम ने कहा था-भगवन्! मैं सत्यकाम हूँ। मेरी माँ का नाम जबाला है। मैंने माँ से पूछा था कि मेरा गोत्र क्या है? तथा मेरे पिता जी कौन हैं? उत्तर में मेरी माँ ने बताया था कि युवावस्था में वे अनेक व्यक्तियों के यहाँ सेवा कार्य किया करती थीं। उन्हीं दिनों परिचर्या करते हुए तुझे प्राप्त किया है। तेरे पिता का सही-सही नाम बता पाना मेरे लिए कठिन है। यह जानते हुए भी गौतम ऋषि ने सत्यकाम की तीव्र विद्याध्ययन की इच्छा को देखते हुए उसे गुरुकुल में प्रवेश दे दिया। यही सत्यकाम बाद में उच्चकोटि का आचार्य बना व सत्यकाम जाबालि के नाम से प्रसिद्ध हुआ। प्राचीन व्यवस्था में हम देखते हैं कि विश्वामित्र ने क्षत्रिय वर्ण से ब्रह्मऋषि पद अपने गुण-कर्म-स्वभाव व योग्यता से प्राप्त किया। पराशर, वशिष्ठ, व्यास आदि निम्न कुलों में उत्पन्न लोग ऋषि-महर्षि के रूप में पूजनीय हुए। दासी पुत्र कवष ऐलूष ने ऋषित्व पद प्राप्त किया। वह ऋग्वेद के एक सूक्त के ऋषि अर्थात् मन्त्र द्रष्टा थे।

शूद्र सन्तान 'वत्स' मन्त्र द्रष्टा बनकर ऋषि कहलाये, शूद्र जन्मा 'मतंग' ऋषि कहलाये। दासी पुत्र विदुर धृतराष्ट्र के महामंत्री बने और महात्मा कहलाये। महात्मा विदुर की विदुर नीति प्रसिद्ध है। ऐतरेय महीदास ने ऋग्वेद पर ऐतरेय ब्राह्मण लिखा। ताण्ड्य ने सामवेद पर ताण्ड्य ब्राह्मण लिखा। यह तो कुछ मात्र उदाहरण हैं। ऐसे अनेक व्यक्ति हुए जिन्होंने अपना वर्ण परिवर्तन कर ऋषि-महर्षि पद को प्राप्त किया। विपरीत स्थिति का उदाहरण रावण का है जो ब्राह्मण कुल में उत्पन्न होकर कर्मानुसार शूद्रत्व को प्राप्त हुआ। जिसका पुतला बुराई के रूप में आज भी सभी लोग दहन करते हैं।

उपरोक्त का सारांश यह है कि वैदिक व्यवस्था के अन्तर्गत गुण-कर्म-स्वभाव के अनुसार ही व्यक्ति को समाज में वर्ण प्राप्त कराया जाता था, जिससे समाज व राष्ट्र का सर्वांगीण विकास हुआ। ऐसा संज्ञान में आया है कि वैदिककाल में (अर्थात् महाभारत काल तक) यह व्यवस्था रही कि हर तीन-पाँच वर्ष में धर्म सभाएं होती थीं। जो युवक-युवती अपना-अपना वर्ण परिवर्तन कराना चाहता था उस धर्म सभा में परीक्षित होकर उस-उसको सम्बन्धित-सम्बन्धित वर्ण में प्रविष्ट करा दिया जाता था। वैदिक सामाजिक व्यवस्था के कारण ही समाज एवं राष्ट्र का चहुँमुखी विकास हुआ जो भारत का स्वर्णकाल कहलाता है। यदि वर्तमान में भी ऐसी आदर्श व्यवस्था समाज में लागू हो जाये तो देश व समाज का कल्याण हो सकता है।

पृष्ठ 4 का शेष-धर्म गुणों की माला है

प्रत्येक से अधिक-अधिक है। वस्तुत: इन सबको मिलाकर धर्म बनता है।

जैसे एक उपवन में अनेक प्रकार के पुष्प लेकर उन्हें एक सुदृढ़ धागे में पिरोकर माला बनायी जाती है, इसी प्रकार उपर्युक्त समस्त गुण-कर्म-स्वभावों को पुष्पों की भाँति मिलाकर माला बनाने पर धर्म बनता है। दूसरे शब्दों में, धर्म समस्त मानवीय गुणों की सुगन्धित माला है। इन सद्गुणों का सम्यक् योग ही वैदिक धर्म एवं मानव धर्म है। यही आत्मा का सदा का मित्र है। सबको इसी का पालन करना चाहिए।

ईश्वर निराकार एवं सर्वव्यापक है

ले.-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

हम अपने शरीर व संसार को देखते हैं तो विवेक बुद्धि से यह निश्चय होता है कि यह अपौरुषेय रचनायें हैं जिन्हें ईश्वर नाम की एक सत्ता ने बनाया है। वह ईश्वर आकारवान या साकार तथा एकदेशी वा स्थान विशेष में रहने वाला कदापि नहीं हो सकता। ईश्वर सर्वज्ञ एवं सर्वशक्तिमान सिद्ध होता है। उसको सृष्टि की रचना करने तथा प्राणियों के मनुष्यादि शरीरों को बनाने सहित अन्न व वनस्पतियों आदि को बनाने का भी ज्ञान है। जब हम इस ब्रह्माण्ड की विशालता को देखते हैं तो यह सिद्ध होता है कि ईश्वर सर्वशक्तिमान भी है। वह उत्पत्तिधर्मा अर्थात् जन्म-मरण के बन्धनों से सर्वथा मुक्त सत्ता है। जिसका जन्म व मरण होता है उसका कारण उस चेतन सत्ता के इच्छा व द्वेष अथवा राग-द्वेष आदि के वश में किये गये कर्म होते हैं।

यदि ईश्वर को भी ऐसा मानेंगे तो वह ईश्वर न होकर एक साधारण मनुष्य के समान हो जायेगा। संसार में दो प्रकार के मनुष्य होते हैं। एक ज्ञानी व दूसरे अज्ञानी व अल्पज्ञानी। ईश्वर को साकार व एकदेशी मानना अल्पज्ञानी मनुष्यों की कल्पना ही कही जा सकती है। जो मनुष्य तपस्वी न हो, जिसको उच्च कोटि के ऋषि, मुनि, विद्वान व आप्तपुरुष आचार्य के रूप में प्राप्त न हों, वह मनुष्य सत्यासत्य को भली प्रकार से नहीं जान सकता। तपस्वी और योगी होने तथा श्रेष्ठ आदर्श आचार्य को प्राप्त होकर मनुष्य में विवेक ज्ञान उत्पन्न होता है जिससे वह संसार के प्रायः सभी रहस्यों को भली प्रकार से जान सकता है। आज शिक्षित व्यक्ति बहुत हैं परन्तु इन सबको विवेक ज्ञान सुलभ नहीं है। इसका कारण इनका केवल भौतिक विद्याओं का अध्ययन करना होता है। भौतिक विज्ञान से मनुष्य अभौतिक सत्ता ईश्वर व आत्मा का ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता। अभौतिक सत्तायें ईश्वर व जीवात्मा आदि अत्यन्त सूक्ष्म हैं जिन्हें आंखों से न तो देखा जा सकता है और न ही इन्हें शब्द, गन्ध, स्पर्श व रस इन्द्रियों के द्वारा पहचाना व जाना जा सकता है। अतः ईश्वर व आत्मा का ज्ञान व साक्षात्कार तो सिद्ध योगी, तपस्वियों व वेद के ज्ञानियों की शरण में जाकर ही हो सकता है। मध्यकाल का समय अज्ञान का समय था। इस बात का ज्ञान प्रायः सभी लोगों को हैं। वेद, उपनिषद, दर्शन, मनुस्मृति ग्रन्थ सभी को प्राप्त व सुलभ नहीं थे।

इन वेदादि ग्रन्थों के सत्यार्थ भी देश देशान्तर के लोगों व आचार्यों को विदित नहीं थे। अतः वह ईश्वर व जीवात्मा के सत्यस्वरूप, जो कि अनादि व नित्य है, जान पाने में असमर्थ रहे। इस क्षेत्र में ऋषि दयानन्द को सफलता इस कारण से मिली कि वह वेदों के व्याकरण और महर्षि यास्क के निरुक्त ग्रन्थ को प्राप्त हुए। इसका उन्होंने गम्भीरतापूर्वक अध्ययन किया और अपने योग एवं तप के बल पर वह ईश्वर व आत्मा सहित संसार के सत्य रहस्यों को जानने में सफल हुए। इसके साथ ही उन्हें वेद व समस्त वैदिक वाङ्मय भी उपलब्ध हुआ जिसके सत्यार्थ भी उन्होंने अपने विद्या व योग की उपलब्धियों से साक्षात् किये। इसी कारण वह सत्योपदेश करने सहित सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय एवं ऋग्वेद-यजुर्वेद भाष्य आदि साहित्य दे सके। उनका दिया गया साहित्य सत्य की कसौटी पर पूर्णत खरा है। सभी विद्वान अष्टाध्यायी, महाभाष्य एवं निरुक्त आदि ग्रन्थों को पढ़कर तथा सिद्ध योगी व तपस्वी बनकर ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों की सत्यता की पुष्टि कर सकते हैं। इसके लिये उनका पूर्णतः निष्पक्ष होना भी आवश्यक है। वेद ईश्वर का दिया हुआ ज्ञान है। वेद ज्ञान ईश्वर ने सृष्टि के आरम्भ में अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को दिया था। इन ऋषियों को सर्वज्ञ, सर्वव्यापक व सर्वान्तर्यामी ईश्वर ने एक-एक वेद ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद का ज्ञान दिया था। यह ज्ञान ईश्वर ने इन ऋषियों की आत्मा के भीतर अन्तर्यामीस्वरूप वा जीवस्थ-स्वरूप से आत्मा में प्रेरणा देकर स्थापित किया था। सभी ऋषि पवित्र व शुद्ध आत्मा थे, इसलिये वह ईश्वर द्वारा प्रेरित वेदों के ज्ञान को अपने चित्त में धारण कर सके व उसे स्मरण रख सके। इसके बाद इन ऋषियों व अन्य ऋषि ब्रह्मा जी के द्वारा वेदाध्ययन, वेद प्रचार की परम्परा आरम्भ हुई जो अद्यावधि जारी है। वेद ईश्वर द्वारा दिया गया ज्ञान है, इसकी पुष्टि वेदों की अन्तःसाक्षी से होती है। वेदों की कोई भी बात, तर्क, युक्ति, ज्ञान व विज्ञान के विरुद्ध नहीं है। वेदों में ईश्वर, आत्मा व सृष्टि सहित सभी पदार्थों का ज्ञान है। वेदों का ज्ञान जैसा सृष्टि में है, पूरा वैसा ही उपलब्ध होता है। इससे वेद सर्वांगपूर्ण व सत्य सिद्ध होते हैं। ऐसा ग्रन्थ संसार में दूसरा कोई नहीं है। कोई मनुष्य कितना भी ज्ञानी क्यों न हो जाये, वास्तविकता यह है कि बिना वेद पढ़े कोई ज्ञानी नहीं हो सकता। वह वेद में उपलब्ध ज्ञान से अधिक बुद्धिमान व ज्ञानी तो कदापि नहीं हो सकता। ऐसा होना सर्वथा असम्भव है।

मनुष्य अल्पज्ञ अर्थात् अल्पज्ञानी होता है। उसकी रचना व ग्रन्थ कभी भी सर्वज्ञ ईश्वर के समान नहीं हो सकते। ऐसा होना असम्भव है। अतः संसार के सभी मनुष्यों को ईश्वर व उसके ज्ञान वेद पर विश्वास करना चाहिये और मनुष्यकृत ग्रन्थों को उसी सीमा तक मानना चाहिये जिस सीमा तक वह शुद्ध वेद ज्ञान के अनुकूल हों। इस नियम को अज्ञानी, हठी तथा दुराग्रही मनुष्य अपने अविद्यादि दोषों के कारण स्वीकार नहीं करते। यदि ऐसा होता तो आज पूरे विश्व में वेद मत ही प्रचलित होता और अविद्यायुक्त मतों का त्याग कर दिया गया होता। अतः ईश्वर प्रदत्त सत्य ज्ञान वेदों को विश्व में सर्वत्र प्रचलित करने में कितना समय लगेगा, कहा नहीं जा सकता? यह तो ईश्वर की अपनी कृपा व प्रेरणा पर निर्भर करता है। जो भी हो परन्तु संसार में सभी मनुष्यों के सत्यवादी व सत्याचारी न होने से वह सदाचारी व धार्मिक लोगों को पीड़ा देते रहते हैं। आज यह स्थिति शिखर पर पहुंची हुई दिखाई दे रही है जिसमें धार्मिक, सदाचारी, निष्पक्ष लोग दुःख पा रहे हैं। आज के सभी मत व वैज्ञानिक एक छोटे से वायरस कोरोना से पीड़ित हैं। ज्ञान का दम्भ भरने वाले इन सब लोगों के पास किसी को कोरोना जैसे तुच्छ वायरस का किंचित भी ज्ञान नहीं है। इनसे बचाव के साधनों का ही प्रचार किया जा रहा है तथापि लोग वायरस से संक्रमित हो रहे हैं। पूरे विश्व के धार्मिक ज्ञानी एवं वैज्ञानिकों को ईश्वर के बनाये एक कोरोना वायरस ने पराजित कर दिया है। ऐसी अवस्था में भी जो ईश्वर के सत्यस्वरूप को नहीं मानता, उसे मननशील, ज्ञानी एवं सत्याचारी मनुष्य कदापि नहीं कह सकते।

इस सृष्टि, मानव व मानवेतर शरीरों तथा वनस्पतियों व अन्न आदि पदार्थों को देखकर ईश्वर का अस्तित्व सिद्ध होता है। हम यह भी जानते हैं कि अभाव से भाव व भाव से अभाव की उत्पत्ति नहीं होती। अतः ईश्वर व जीवात्मा एक अनादि व नित्य तथा कभी अभाव व नाश को प्राप्त न होने वाली सत्तायें सिद्ध होती हैं। ईश्वर है तो उसका निश्चित स्वरूप भी है ही। वह साकार है व निराकार? ईश्वर साकार नहीं हो सकता, इसका कारण यह है कि साकार वस्तु सीमित होती है। ईश्वर का यह विशाल ब्रह्माण्ड उसे निराकार व सर्वव्यापक सिद्ध करता है। रचना व क्रिया उसी देश व स्थान विशेष पर होती है जहां क्रिया करने वाली सत्ता विद्यमान हो। ईश्वर की क्रियायें पूरे ब्रह्माण्ड में दृष्टिगोचर होती हैं अतः वह सर्वव्यापक व सर्ववेशी सिद्ध होता है। साकार वस्तु से सृष्टि व शरीरों के परमाणु व अणु नहीं बन सकते। साकार को बनाने वाला पूर्णतः साकार नहीं हो सकता। ईश्वर मां के गर्भ में भी रचना करता है। अतः उसका गर्भ के अन्दर व बाहर दोनों स्थानों में होना आवश्यक है। जबकि साकार वस्तु बाहर से ही रचना कर सकती है। सर्वव्यापक व निराकार ईश्वर ही संसार की सभी वस्तुओं के अन्दर व बाहर दोनों स्थानों पर होता है। अतः ईश्वर सदा, सर्वदा, हर स्थिति में निराकार ही होता है। वेदों में भी उसे निराकार बताया गया है।

सर्वव्यापक वस्तु कभी भी साकार नहीं हो सकती। ऋषि दयानन्द ने ईश्वर के साकार व निराकार होने या न होने की अपने विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में समीक्षा की है। वहां यह सिद्ध किया गया है कि ईश्वर निराकार ही होता है। अतः ईश्वर को साकार मानने वालों को निष्पक्ष बुद्धि से निर्णय करना चाहिये। ईश्वर निराकार व सर्वव्यापक होने से पूरे ब्रह्माण्ड में व्यापक है। अतः वह एकदेशी व किसी स्थान विशेष पर रहने वाला नहीं हो सकता। वह सभी मानवों के शरीर में भीतर व बाहर विद्यमान होता है। वह निराकार स्वरूप से ही सृष्टि को बनाता, पालन करता व प्रलयकर्ता है। अतः किसी दुष्ट व पापी को मारना तथा अन्य किसी भी कार्य को करने के लिये उसे जन्म लेने व एकदेशी होने की आवश्यकता नहीं है। सर्वव्यापक होने से वह कहीं न तो जाता है और न कहीं आता है। वह पृथिवी पर भी है, आकाश में भी, सागर में भी और पहले दूसरे से लेकर हजारवें व करोड़वे आसमान पर भी है। अतः उसे किसी एक स्थान पर मानना और उसका पता न बताना व उससे संवाद आदि न करना कराना उसके एकदेशी होने को असत्य सिद्ध करते हैं। ईश्वर को सर्वव्यापक व सर्वदेशी मानने से सृष्टि के सभी रहस्य सुलझ जाते हैं। यह मान्यता ज्ञान व विज्ञान से भी पोषित है। अतः ईश्वर सर्वव्यापक होने से सभी स्थानों में है। मनुष्यों की तरह से उसका अपना शरीर नहीं है। वह घट-घट का वासी है। ईश्वर का प्रत्यक्ष व साक्षात्कार कोई भी योगी अपनी आत्मा में कर सकता है। ईश्वर का साक्षात्कार करना ही मनुष्य जीवन का उद्देश्य होता है। योग का उद्देश्य ही चित्त की वृत्तियों को नियंत्रित कर ईश्वर का साक्षात्कार करना होता है। न केवल महर्षि दयानन्द अपितु उनसे पूर्व सहस्त्रों ऋषियों व योगियों ने ईश्वर का साक्षात्कार किया है। यह साक्षात्कार पृथिवी पर रहकर ही होता है। अतः ईश्वर सर्वव्यापक, सर्वदेशी, सर्वत्र विद्यमान होना सिद्ध होता है। ऐसा ही सब मत-मतान्तरों व धार्मिक मनुष्यों को मानना चाहिये। इसी में सबका कल्याण है और इसके विपरीत मानने में हानि है।

पृष्ठ 2 का शेष-वैदिक त्रैतवाद की सार्वभौमिकता

जड़ चेतन के समान दो प्रकार का शुद्ध जगत है। हे जगत् के उत्पन्न करने वाले जगदीश्वर। हम लोग आपको यज्ञ का अनुष्ठान करने के लिए आश्रय करते हैं।

परमात्मा निराकार है इसलिए उसकी प्रतिमा नहीं बन सकती है। इस पर कहा गया है-'हे मनुष्यों। जिस ब्रह्म का बड़ा यशस्वी आचरण ही नाम स्मरण है। जो सूर्य, विद्युत आदि पदार्थों का आधार इस प्रकार वह अन्तर्यामी मुझे अपने से विलग न करे। ताड़ना न दे। यह प्रार्थना स्वयंभू के लिए है। वही उपासना के योग्य है। उसकी कोई मूर्ति नहीं है और न बन सकती है। बुद्धिमान पुरूष उस अति श्रेष्ठ परब्रह्म को देखता है जो ब्रह्म हृदय गुफा के अन्दर विराजमान है। जिसमें सब जगत् एक रूप वर्तमान है। इस परम ऐश्वर्य के कारण को ईश्वर से स्पर्श रखने वाले मनुष्य ने उत्पन्न होती हुई अनेक रचनाओं से दुहा है। सुख स्वरूप ब्रह्म को आदित्यवर्ण ब्रह्म के जानने वाले वरणीय विद्वानों ने उस ब्रह्म की विविध प्रकार से वन्दना की है।

वैज्ञानिकों का कहना है कि महा विस्फोट के समय परमात्मा जाग्रत नहीं था वरन वह तन्द्रा अवस्था में रहा होगा इस पर कहा गया है कि परमात्मा प्रलय की अवस्था में सोया हुआ था उसने सृष्टि उत्पन्न करके आकर्षण आलप वृष्टि आदि द्वारा संसार के हित के लिए सूर्य पृथ्वी, बृहस्पति, शुक्र आदि असंख्यक लोकों की रचना की। उस परमेश्वर का सामर्थ्य विचार कर हम भी संसार का उपकार करें।

परमात्मा सर्वव्यापक है। इस विषय में कहा गया है जो पुरूष खड़ा होता अथवा चलता है और जो किसी से ठगी कर रहा है और जो भीतर घुस कर बाहर निकल कर काम करता है और वो दो व्यक्ति एक साथ बैठकर जो कुछ कानाफूसी करते है तीसरा सर्वव्यापक वरणीय परमेश्वर उसे जानता है।

जीवात्मा और परमात्मा को नाना प्रकार से सम्बोधित किया गया है जैसे कहा गया है-'हे वसाने वाले। हे सैकड़ों कर्मों को करने वाले परमेश्वर तू ही हमारा पिता और तू ही हमारी माता है इसलिए हम तुझसे सुख की याचना करते हैं। वेदों में इस प्रकार के वर्णन ने सिद्ध कर दिया है कि वेदों में विवर्त अद्वैत्ववाद विशिष्टाद्वैतवाद, द्वैतवाद, शुद्धाद्वैतवाद आदि किसी भी मत का समर्थन नहीं किया है। वेद में तो त्रैतवाद पर ही बल दिया गया है। अब हम थोड़ा उपनिषदों के विचार भी पाठकों के सामने रख रहे हैं दो ज्ञानी (ब्रह्म) व अज्ञानी जीव दोनों ही अजन्मा समर्थ स्वामी (ब्रह्म) तथा असमर्थ (जीव) व तीसरा निश्चय से एक अजा और है। (प्रकृति) जो भोगने वाले जीव के भोगों से युक्त (अर्थात् भोग के लिए है) और परमात्मा अनन्त विश्वरूप है निश्चय से वह कर्म और फल बन्धन में नहीं फंसता। जब (जीव) उक्त तीनों (ब्रह्म, जीव और प्रकृति) को पा लेता है या जान लेता है तब कहता है कि यह सर्वव्यापी अन्तर्यामी ब्रह्म है। आगे इसी धारणा को विस्तार देते हुए कहा गया है प्रकृति (कार्यरूप) नाशवान है, संहर्ता, ब्रह्म अविनाशी है। नाशवान (कार्यरूप) प्रकृति और अविनाशी जीव इन दोनों पर एक परमदेव, परमात्मा स्वामित्व करता है।? उसे ब्रह्म के पूरे तौर पर ध्यान करने से अपने आत्मा को उसमें युक्त करने से और उसमें तन्मय होने से फिर अन्त में संसार की माया से निवृत्ति हो जाती है।

मैं समझता हूं कि त्रैतवाद का समर्थन ये विवरण सफलता से कर रहे हैं, एक उदाहरण और देता हूं। उपनिषद् में कहा गया है प्रकृति, जीव और परमात्मा तीनों अज अर्थात् जिनका कभी जन्म नहीं हुआ और न अन्त होगा। यह तीनों जगत् के कारण है। इनका कारण कोई नहीं है। इस अनादि प्रकृति का भोग जीव करता हुआ फंसता है परमात्मा न उसका भोग करता और ना ही फंसता है।

सृष्टि की उत्पत्ति कैसे होती है? इसे अलंकारिक भाषा में कहा गया है-'जैसे मकड़ी जाला उत्पन्न करती है और अपने भीतर समेट लेती है जैसे पृथ्वी पर औषधियां उत्पन्न होती है जैसे पुरूष जीव के होने से शरीर पर केश और लोम उत्पन्न होते हैं वैसे ही उस अविनश्वर पुरूष (ब्रह्म) से यह ब्रह्माण्ड उत्पन्न होता है।

शोक प्रस्ताव

वैदिक संस्कार वाटिका पठानकोट में गुरू पूर्णिमा के अवसर पर आर्य जगत् के उच्चकोटि के विद्वान्, चारों आश्रमों में विधिवत् जीवन व्यतीत करने वाले वैदिक मनीषी, लेखक, कवि, गुरूकुल शिक्षा पद्धति के समर्थक महात्मा चैतन्यमुनि जी महाराज के आकस्मिक निधन पर शोक व्यक्त किया गया। यज्ञ के पश्चात सभी लोगों ने पूज्य महात्मा जी को अपनी भावभीनी श्रद्धाजंलि अर्पित की। संचालक मण्ड़ल के श्रीमान अशोक जी, राजकुमार अग्निहोत्री जी, रमेश नैब जी, आचार्य विजय कुमार जी, आचार्य सुनील कुमार जी ने पूज्य महात्मा जी को अपने श्रद्धासुमन अर्पित किए। वैदिक संस्कार वाटिका के विद्यार्थियों एवं सदस्यों नेहा, मुस्कान, दीक्षा, ससागर शर्मा व जरनैल सिंह आदि ने महामृत्युञ्जय मन्त्रों का पाठ करते हुए परमपिता परमात्मा से दिवंगत आत्मा की शान्ति एवं सद्गति के लिए प्रार्थना की।

इस अवसर पर सभी उपस्थित महानुभावों ने दु:ख व्यक्त करते हुए अनुभव किया कि वैदिक धर्म का एक सच्चा प्रचारक हमसे सदा के लिए और असमय दूर हो गया। उनके निधन से आर्य समाज की अपूरणीय क्षति हुई है। ईश्वर शोक संतप्त पूज्य माता सत्याप्रिया जी एवं उनके पूरे परिवार को शक्ति व धैर्य प्रदान करें।

-आचार्य सुनील कुमार संचालक वैदिक संस्कार वाटिका

जैन धर्म और बौद्ध धर्म ईश्वर को नहीं स्वीकार करते हैं तो उनके पास इस प्रश्न का कोई समुचित उत्तर नहीं है कि यदि ईश्वर नहीं है तो वह सृष्टि कैसे उत्पन्न होती है, उत्तर में वह कह देते हैं कि सृष्टि तो सदैव से है इसकी ना तो कभी उत्पत्ति होती है और ना ही कभी अन्त ही होगा। परन्तु यह सत्य नहीं है। विज्ञान ने अब यह सिद्ध कर दिया है कि सृष्टि की उत्पत्ति लगभग 13 अरब वर्ष पूर्व हुई है। पहले यह माना जाता था कि प्रकृति पदार्थ और ऊर्जा से मिलकर बनी है यह भी माना जाता था कि वे दोनों कभी नष्ट नहीं होते केवल इनके रूपों में परिवर्तन होता है। परन्तु अब सापेक्षता सिद्धान्त ने यह सिद्ध कर दिया है कि पदार्थ और ऊर्जा को एक दूसरे में बदला जा सकता है फिर जीवात्मा के विषय में कुछ वैज्ञानिकों का तो कहना है कि जीव की उत्पत्ति जड़ पदार्थ में ही कुछ परिवर्तन होने से हो जाती है परन्तु अधिकांश वैज्ञानिकों का मत इस धारणा के विपरीत है जीव विज्ञान के मेरीलेण्ड विश्वविद्यालय में प्रोफेसर रहे डॉ. मरलिन बुक्स का कहना है। लुमुई पाश्चर के समय ही यह वैज्ञानिक तथ्य स्वीकार किया जाता रहा है कि किसी अजीव द्रव्य से जीव की उत्पत्ति नहीं हो सकती है विविध परिस्थिति जन्य अव्यवस्थाएं पैदा करने के लिए अनेकानेक छोटे बड़े उपकरणों से सुसज्जित हमारी प्रयोगशालाएं प्रोटोप्लाज्म के कुछ संघटक भागों को तैयार करने में तो सफल हो गयी है किन्तु जीव को पैदा करने में नहीं।

इससे प्रमाणित होता है कि जीव की स्वतन्त्र सत्ता है। इसी प्रकार अधिकांश वैज्ञानिक ईश्वर की सत्ता स्वीकार करते हैं उनके अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति में ईश्वर का ही हाथ है। उसी ने ठीक तरह से Big Bang महाविस्फोट का आयोजन किया है। डा. वी मूर M.A.D. Sc. F.R.S. ने अपने पुस्तक Origin and Nature of Life में लिखा है, 'The ordered beauty of the world and nature suggests and infinite intelligence with the power of action such as no man or other creature ossesses' इसी प्रकार Science and Idea of God by W.M. Earnest Hacking में आइन्स्टीन के लेख का उद्धरण दिया गया है-I believe in God who reveals himself in orderly harmony of the universe. I believe that intelligence in manifasted through out all nature. The basis of all scientific work in the conviction that the world in an ordered and comprehensive entity and not a thing at chance. इससे सिद्ध हो गया है कि विज्ञान भी त्रैतवाद को स्वीकार करता है। इस सम्पूर्ण विवरण से सिद्ध हो गया है कि वैदिक त्रैतवाद एक सार्वभौमिक सिद्धान्त है।

गांधी आर्य हाई स्कूल एवं दयानन्द केन्द्रीय विद्या मंदिर बरनाला में शांति यज्ञ का आयोजन

दयानन्द केन्द्रीय विद्या मंदिर बरनाला में करोना महामारी को समाप्त करने के लिये विश्व शांति महायज्ञ किया गया जिसमें श्री राम कुमार सोबती, श्रीमती अनीता मित्तल प्रिंसीपल, श्री बलविन्द्र सिंह तथा गांधी आर्य सी.सै.स्कूल का स्टाफ एवं दयानन्द स्कूल का स्टाफ सम्मिलित हुआ। चित्र दो में गांधी आर्य हाई स्कूल बरनाला में विश्व शान्ति महायज्ञ का आयोजन किया गया जिसमें एस.एस.पी. संदीप गोयल विशेष रूप से पधारे। बरनाला आर्य समाज के प्रधान डा. सूर्यकान्त शोरी तथा सैक्रेटरी श्री भारत भूषण मेनन तथा अन्य प्रबन्धक कमेटी सदस्य वहां पर पहुंचे और श्रद्धापूर्वक यज्ञ सम्पन्न किया गया।

गांधी आर्य हाई स्कूल बरनाला एवं दयानन्द केन्द्रीय विद्या मंदिर बरनाला में कोरोना महामारी से जूझ रहे विश्व के कल्याण, शान्ति एवं स्वास्थ्य की कामना करते हुए यज्ञ का आयोजन किया गया। इस यज्ञ के द्वारा विश्व की कोरोना महामारी से मुक्ति हेतु प्रार्थना की गई। इस अवसर पर प्रवचन करते हुये आर्य समाज के पुरोहित ने यज्ञ पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि यज्ञ शब्द अनन्तता का सूचक है। स्वयं जीवन भी एक यज्ञ है, इस जीवन यज्ञ को सुनियमित बनाने के लिए ब्रह्मयज्ञ एवं देवयज्ञ दोनों ही अपेक्षित हैं। ब्रह्मयज्ञ चिन्तन में सम्बद्ध हैं। आत्मा को बलवान बनाने के लिए, इन्द्रियों को संयमित एवं सशक्त करना उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि सारथि के साथ रथ को सुचारू रूपेण चलाने योग्य। इन्द्रियों को बलवान, यशस्वी एवं पवित्र बनाने के लिए ब्रह्म यज्ञ किया जाता है। मुण्डकोपनिषद में कहा गया है कि– नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः अर्थात् निबर्लेन्द्रिय ईश्वर को प्राप्त नहीं कर सकते। ईश्वर के गुण स्वभाव को अपने अन्दर लाने एवं उन गुणों के अर्थ की भावना मन में धारण करने से मनुष्य के अन्तःकरण में उन गुणों का प्रभाव पड़ता है और क्रमशः वे मानव जीवन से अभिन्न हो जाते हैं। गुणों के समावेश से ईश्वर का सामीप्य ही ब्रह्म यज्ञ का लक्ष्य है। सन्ध्या, स्वाध्याय के अनन्तर देवयज्ञ का विधान है जो सैद्धान्तिक एवं धार्मिक होने के साथ-साथ सामाजिक, सुखशान्ति एवं नियमन का भी प्रेरक है। आध्यात्मिकता के साथ-साथ वैज्ञानिकता से परिपूर्ण इस यज्ञ के विषय में आर्ष ग्रन्थों में कहा गया है कि– अग्निहोत्रं जुहुयात् स्वर्गकामः अर्थात् स्वर्ग की इच्छा रखने वाला पुरूष अग्निहोत्र करे। इस भौतिक यज्ञ से जलवायु शुद्ध होती है एवं रोगकारक कीटाणुओं का नाश होता है। प्राणशक्ति के संवर्धन के साथ परिमित वृष्टि करने में भी भौतिक यज्ञ अत्यन्त सहायक है। यज्ञ क्या है? इसका स्वरूप, उपयोगिता तथा सीमा क्या है? क्या यज्ञ पात्र, यज्ञशाला, हवन सामग्री ही इसके साधन हैं? वस्तुतः तो प्रत्येक श्रेष्ठतम कल्याण कार्य यज्ञ है। यज्ञ शब्द का मौलिक अर्थ यजधातु में है। यज–देवपूजा संगतिकरणार्थ दानेषु अर्थात् जिसमें प्राणीहित, लोकहित एवं सबके प्रति सद्भावना तथा सहृदयता के कार्य सम्पन्न होते हैं वह कर्म श्रेष्ठतम कर्म है, यज्ञ का यही स्वरूप है। यज्ञ का ही स्वरूप यह संसार है। सृष्टि यज्ञ प्राकृतिक देव शक्तियां करती हैं।

इस अवसर पर आर्य समाज के प्रधान श्री सूर्यकान्त जी शोरी, सचिव श्री भारत भूषण मेनन, वरिष्ठ उपप्रधान श्री केवल जिन्दल, बरनाला नगरपालिका प्रधान श्री संजीव शोरी, सदस्य श्री प्रदीप गोयल, श्री सुखमहेन्द्र सिंह संधू, डॉ. टार्जन शर्मा, प्रिंसीपल श्रीमती अनीता मित्तल, श्री राम कुमार सोबती एवं दोनों स्कूलों गांधी आर्य हाई स्कूल बरनाला एवं दयानन्द केन्द्रीय विद्या मंदिर बरनाला का सारा स्टाफ उपस्थित रहा।

वेदवाणी

अमरत्व की घोषणा

मृत्योः पदं योपयन्तो यदैत द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः।
आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः।।
–ऋ. १०।१८।२; अथर्व० १२।२।३०

ऋषिः–**सङ्कसको यामायनः**।। देवता–**मृत्युः**।। छन्दः–**त्रिष्टुप्**।।

विनय–संसार के प्रत्येक प्राणी पर मृत्यु ने पाँव रखा हुआ है। जिस दिन उसकी इच्छा होती है उस दिन वह उस पाँव को दबाकर प्राणी को कुचल डालती है, समाप्त कर देती है, पर, हे नरतनधारी मनुष्यो! तुममें वह शक्ति है जिससे कि तुम मृत्यु के उस पैर को धकेल कर अमर बन सकते हो। इस संसार में तुम मरे हुओं की तरह न रहकर, न सड़कर, अमर पुत्रों की तरह दृढ़ता से चलो; शुद्ध, पूत और यज्ञिय बन जाओ। ऐसे बनने से तुममें वह आत्मशक्ति जग जाएगी कि तुम उस मृत्यु के पैर को धकेल फैंकोगे। ठीक आहार, व्यायाम, तप आदि द्वारा शरीर को शुद्ध रखो और अन्दर सत्त्वशुद्धि, सौमनस्यादि लाकर अन्तःकरण को पवित्र रखो; और फिर इस शरीर और मन से यज्ञिय कर्म ही करते जाओ; इससे तुम निःसन्देह अमर निकल आओगे। यह सच है कि यज्ञिय जीवन से मृत्यु मारी जाती है, तब मनुष्य की आयु सौ वर्ष तक चलने वाला यज्ञ हो जाता है, तब वह मनुष्य पूर्ण सौ वर्ष की दीर्घ=विस्तृत आयु को यज्ञरूप में धारण करता है। हम मरे हुए मनुष्य तो आयु को 'धारण' नहीं कर रहे हैं, किन्तु आयु के बोझ को जैसे-तैसे ढो रहे हैं। जब शरीर को आत्मा धारे हुए होता है तो आत्मा शरीर को पूर्ण सौ वर्ष तक स्वस्थ चलने की–जीवन–यज्ञ को सौ वर्ष तक अखण्डित चलने की–आज्ञा देता है और इस जीवन में प्रजा को सृजने द्वारा तथा धन के बढ़ाने द्वारा अपनी विकास की इच्छा को परितृप्त करके यज्ञ को पूर्ण करता है। आत्मशक्ति का प्रकाश करने के लिए ही आत्मा शरीर को धारण करता है, अतः शरीर पाकर इस जगत् में कुछ-न-कुछ उपयोगी वस्तु का प्रजनन करना, सृजन (Create) करना तथा जगत् के सच्चे ऐश्वर्य को (धन को) बढ़ा जाना आवश्यक है। संसार में आई सब महान् आत्माएँ इस संसार में कुछ-न-कुछ जगत्-हितकारी वस्तु का सृजन करके तथा जगत् में किसी उच्च-से-उच्च ऐश्वर्य को बढ़ाकर जाती हैं। हे मनुष्यो! उठो, मृत्युमय जीवन छोड़ो, शुद्ध, पूत तथा यज्ञिय बनो और मृत्यु के पैर को परे हटाकर अपने अमरत्व की घोषणा कर दो।

शोक प्रस्ताव

आर्य समाज के विद्वान् श्रद्धेय महात्मा चैतन्यमुनि जी के निधन से सम्पूर्ण आर्य जगत् शोक में डूब गया है। पूज्य महात्मा सरल स्वभाव के सौम्य और मधुर व्यक्तित्व वाले विद्वान् थे। उन्होंने लगभग 70 से अधिक पुस्तकों एवं कविताओं का लेखन किया। महात्मा चैतन्यमुनि जी के निधन से आर्य जगत् को बहुत क्षति हुई है जिसे पूरा नहीं किया जा सकता। सभी आर्य जन उनके दर्शनों के लिए व्याकुल थे। कोरोना वायरस के कारण उनके अन्तिम दर्शनों से वंचित रह गए।

हम सभी परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि दिवंगत आत्मा को प्रभु अपनी अमृतमयी गोद में स्थान दें और पूज्या माता सत्याप्रिया जी एवं बच्चों को इस दारूण दुःख को सहन करने की शक्ति प्रदान करें। आर्य समाज अलावलपुर के सभी सदस्य बलदेव जिन्दल, अनन्तशरण जिन्दल, परमानन्द अग्रवाल, सत्यशरण गुप्ता, परमानन्द कक्कड़, जय प्रकाश शास्त्री, पं. राजेश अमर प्रेमी, रमेश गुप्ता, श्रीमती कान्ता गुप्ता, श्रीमती किरण जिन्दल, आर्यमित्र गुप्ता, महेन्द्र लखनपाल, सुदेश वालिया, ऊषा भनोट आदि सभी शोक संतप्त परिवार के प्रति अपनी संवेदना व्यक्त करते हैं।

–सत्यशरण गुप्ता आर्य समाज अलावलपुर

स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की तरफ से मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक प्रेम भारद्वाज द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड़ जालन्धर पंजाब से मुद्रित एवं गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से प्रकाशित।
सम्पादक–प्रेम भारद्वाज
पीआरबी एक्ट के तहत प्रकाशित सामग्री के चयन हेतु उत्तरदायी किसी विवाद का न्यायिक क्षेत्र जालन्धर होगा। आर एन आई संख्या 26281/74 **E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org**